ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO.- 310-313

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-14, No.-III, Issues-21, YEAR- Sept.-2021

आजादी का अमृत महोत्सव और आदिवासी सेनानी

डॉ0 स्वपना मीना E-mail:aaryvart2013@gmail.com

Received- 22.07.2021, Revised- 25.07.2021, Accepted - 02.08.2021

सारांश : *आजादी का अमृत महोत्सव आजाद भारत के 75 वर्ष पूर्ण होने पर भारत के लोगों, उनकी संस्कृति और उपलब्धियों के गौरवशाली इतिहास को याद करने और जश्न मनाने के लिए भारत सरकार की ओर से की जाने वाली एक पहल है जो कि भारत की सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक और आर्थिक पहचान को उन्नति की ओर ले जाने का एक मूर्त रूप है। आजादी का अमृत महोत्सव की आधिकारिक यात्रा 12 मार्च 2021 से आरंभ हो गई। यह महोत्सव भारत की स्वतंत्रता की 75 वीं वर्षगांठ से आरंभ होकर 15 अगस्त 2023 को समाप्त होगा। भारत के प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने आजादी के अमृत महोत्सव की व्याख्या करते हुए कहा है "आजादी का अमृत महोत्सव यानी– आजादी की ऊर्जा का अमृत। आजादी का अमृत महोत्सव यानी– स्वाधीन सेनानियों से प्रेरणाओं का मृत। आजादी का अमृत महोत्सव यानी– नए विचारों का अमृत। नए संकल्पों का अमृत। आजादी का अमृत महोत्सव यानी– आत्मनिर्भरता का अमृत। और इसीलिए यह महोत्सव राष्ट्रीय जागरण का महोत्सव है। यह महोत्सव स्वराज्य के सपने को पूरा करने का महोत्सव है। यह महोत्सव वैश्विक शांति का, विकास का महोत्सव है।"*

कुंजीभूत शब्द–अमृत महोत्सव, सांस्कृतिक, राजनीतिक, आर्थिक पहचान।

हम आज इस महोत्सव को मना रहे हैं जिसके पीछे प्रमुख भूमिका भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन की है। भारत का स्वतंत्रता आंदोलन वह आंदोलन था जिसमें किसान, मजदूर, राजा, रंक, कवि, व्यापारी सभी बढ़–चढ़कर भाग ले रहे थे। इस आजादी रूपी यज्ञ में अनेक विभूतियों द्वारा आहुतियां दी गई। वे चाहते थे कि आने वाली पीढ़ियों को गुलामी में जीवन व्यतीत न करना पड़े। इसीलिए उन्होंने भारतीय लोगों पर हो रहे अन्याय व शोषण के खिलाफ जंग छेड़ रखी थी। इस लंबी जंग के बाद ही भारत को स्वतंत्रता प्राप्त हुई।

आजादी का यह अमृत महोत्सव स्वतंत्रता का ही उत्सव है। राजस्थानी गीतकार हरीश बी.शर्मा के शब्दों में–

"इमरत उच्छव आजादी, रो खूब उमाव मनाओ
भूल्या ना उण सेनान्यां ने, बिड़द उणां रो गाओ
आजादी रे चाव निछावर, घर–दुकान–खलिहान
कुटंब–कड़ूबो बिरसाय, मायड़ रो राख्यौ मांण
जबड़े सूं मुगतायौ देस ने, ऐ नवजुग रा भगवान
प्राण दियां जस मानै ऐड़ी भौम है राजस्थान...

सहायक आचार्य– समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दू विश्व विद्यालय, वाराणसी (उ0प्र0), भारत

अनुरूपी लेखक/संयुक्त लेखक

अर्थात् स्वतंत्रता का यह अमृत उत्सव है, हमें खुशियां मनानी हैं लेकिन उन सेनानियों को नहीं भूलना है जिनकी वजह से आजादी मिली है। हमें उनकी प्रशस्तियां गानी हैं। ऐसे लोग जिन्होंने आजादी के लिए घर, दुकान और खेत सारे न्योछावर कर दिए। परिवार को भूल गए, लेकिन मातृभूमि का मान रखा। सामन्तों और अंग्रेजों के जबड़ों से भारत माता को मुक्ति दिलाई। वास्तव में यह नए युग के भगवान हैं। नए युग के ये भगवान संपूर्ण भारत में अपने–अपने अंदाज में भारत माता की मुक्ति हेतु संघर्षशील रहे, चाहे वह देश के किसी भी कोने का रहने वाला, देश के किसी धर्म–संप्रदाय को मानने वाला अथवा देश की किसी भाषा को बोलने वाला ही क्यों ना हो। संपूर्ण भारत में उत्तर से लेकर दक्षिण तक पूरब से पश्चिम तक आजादी की एक आंधी चली थी जिसका ही परिणाम रहा है कि आज हमारा देश वर्तमान स्थिति तक पहुंचा है। देश की उन्नति चाहे वह सामाजिक रूप से हुई है अथवा सांस्कृतिक रूप से, राजनैतिक रूप से हुई है अथवा आर्थिक रूप से। इसका पूर्ण श्रेय स्वतंत्रता सेनानियों को ही जाता है। स्वतंत्रता सेनानियों के बलिदान के फलस्वरूप ही हम इस महोत्सव को मना रहे हैं। माननीय प्रधानमंत्री के शब्दों में "आजादी के आंदोलन के इतिहास की तरह ही आजादी के बाद के 75 वर्षों की यात्रा सामान्य भारतीयों के परिश्रम, इनोवेशन, उद्यमशीलता का प्रतिबिंब है। हम भारतीय चाहे देश में रहे हों या फिर विदेश में, हमने अपनी मेहनत से खुद को साबित किया है। हमें गर्व है हमारे संविधान पर। हमें गर्व है हमारी लोकतांत्रिक परंपराओं पर। लोकतंत्र की जननी भारत, आज भी लोकतंत्र को मजबूती दिए हुए आगे बढ़ रहा है। ज्ञान–विज्ञान से समृद्ध भारत आज मंगल से लेकर चंद्रमा तक अपनी छाप छोड़ रहा है।" छाप के प्रमुख श्रेयी हमारे स्वतंत्रता सेनानी ही हैं। आज हमें उन स्वाधीन सेनानियों से प्रेरणा लेकर भारत की एकता एवं अखंडता के लिए, भारत के विकास के लिए, भारत की लोकतांत्रिक परंपराओं के लिए सतत् प्रयासरत रहना चाहिए।

इसी संदर्भ में कहना होगा कि आदिवासी सेनानियों के शौर्य एवं वीरता की गाथाओं के माध्यम से हमें प्रेरणा लेकर भारत की उन्नति में भागीदार बनना आवश्यक है। आदिवासी स्वतंत्रता आंदोलन को गति प्रदान करने में प्रमुख भूमिका निभाने वाली कौम रही है। इनके शौर्य एवं वीरता की कहानी सदियों से चली आ रही हैं। ये लोग सदैव स्वतंत्रता

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-14, No.-III, Issues-21, YEAR- Sept.-2021

प्रेमी एवं स्वाभिमानी रहे हैं। इन्होंने संघर्षशील रहकर अपनी अस्मिता को बचाए रखने का प्रयास किया है। भले ही इनका विद्रोह बंटा हुआ रहा हो लेकिन इन्हीं के प्रयास से भारतीय स्वतंत्रता के आंदोलन की आधारशिला बनी। कहने का तात्पर्य यह है कि भारत के स्वतंत्रता आंदोलन को खड़ा करने में आदिवासी समुदाय द्वारा किए गए आंदोलनों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

यहां यह ध्यान देना अति महत्वपूर्ण है कि इतिहासकारों ने आदिवासी आंदोलनों को इतिहास में वह स्थान प्रदान नहीं किया जिसके वे हकदार थे। मसलन अधिकांश आदिवासी आंदोलन इतिहास के पन्नों से गायब हैं। यदि हम इतिहास उठाकर देखें तो ज्ञात होगा कि अंग्रेज सीधे भारत पर राज नहीं कर रहे थे अपितु राजा–महाराजाओं, सामंतों, जमींदारों के माध्यम से राज किये हुए थे। अर्थात् भारतीय जनता पर अंग्रेजों की हुकूमत के साथ राजा–महाराजाओं, सामंतों एवं जमींदारों का अत्याचार भी विभिन्न माध्यमों यथा राजस्व–कर, लगान आदि के माध्यम से किया जा रहा था । उन पर नित नए–नए कानून लागू कर राजस्व–कर वसूली के बहाने अत्याचार एवं शोषण कर रहे थे। ऐसी स्थिति में आदिवासियों का अंग्रेजों व जमींदारों से सीधा संघर्ष चल रहा था। यह संघर्ष अनवरत था। सन् 1857 की क्रांति को भारत के स्वतंत्रता संघर्ष का प्रथम आंदोलन कहा जाता है किंतु आदिवासी समुदाय द्वारा विभिन्न स्तरों पर इससे भी लगभग सैकड़ों वर्ष पूर्व आदिवासी आंदोलन आरंभ हो गए थे। जिन्हें इतिहास से दरकिनार कर दिया गया।

आज भारत देश में आजादी का अमृत महोत्सव का आयोजन किया जा रहा है जिसके माध्यम से भारतीय परंपरा, संस्कृति एवं लोकतांत्रिक मूल्यों को समृद्ध करने के साथ–साथ स्वतंत्रता सेनानियों के जीवन से प्रेरणा लेने का संकल्प लिया जा रहा है। लेकिन यह संकल्प तब तक अधूरा ही है जब तक हम आदिवासी योद्धाओं के जीवन को नहीं समझते। उनके जीवन से राष्ट्रभाव की प्रेरणा नहीं लेते। क्योंकि सही मायने में स्वतंत्रता आंदोलन का आरंभ ही आदिवासी नायकों के द्वारा किया गया है। अतः आजादी का अमृत महोत्सव को यदि सफल बनाना है तो हमें उनके जीवन से परिचित होकर उनकी शहादत को सम्मान देना होगा। उनके जीवन से प्रेरित होकर भारत देश को नए विचारों के साथ नई बुलंदियों पर पहुंचाना होगा। आदिवासी नायकों में प्रमुख स्वतंत्रता सेनानियों के जीवन की बात की जाए तो इनमें निम्नानुसार नायकों को प्रमुख स्थान दिया जा सकता है।

तिलका मांझी : सन् 1857 से पूर्व भारत देश के भिन्न–भिन्न स्थानों पर क्रांति की ज्वाला भड़क रही थीं। जिनमें आजादी के विद्रोह के विगुल की झलक देखने को मिलती है। इन आजादी के विद्रोहियों में एक नाम प्रमुखता से लिया जाता है वह है – 'तिलका मांझी'। तिलका मांझी का जन्म बिहार में 11 फरवरी 1750 को हुआ। कई इतिहासकार इन्हें प्रथम स्वतंत्रता सेनानी मानते हैं। कहा जाता है कि 'तिलका' का तात्पर्य है ऐसा व्यक्ति जो गुस्सैल हो और जिसकी आंखें लाल–लाल हों। तिलका का स्वभाव भी गर्मजोशी भरा था इसलिए उनका नाम 'तिलका' पड़ गया।

तिलका मांझी ने बचपन से प्रकृति को अंग्रेजों द्वारा कुचले जाते देखा था। अंग्रेजों द्वारा उसके लोगों पर किए जाने वाले अत्याचार देखकर ही वह बड़ा हुआ। गरीबों की जमीन, खेत, खेती आदि पर अंग्रेजों के अवैध कब्जे ने ही उनके दिल में छिपी स्वतंत्रता की आग को हवा दी। तात्कालिक समय में अंग्रेज और महाजन आपस में मिले होते और महाजन धोखे से उधार चुकाने में असमर्थ आदिवासियों की जमीन हड़प लेते। तिलका मांझी का जीवनी यह सब देखते हुए व्यतीत हो रहा था। साथ ही अंग्रेजो के खिलाफ गुस्सा बढ़ता जा रहा था। सन् 1770 तक आते–आते उन्होंने अंग्रेजों से लोहा लेने हेतु संपूर्ण तैयारी आरंभ कर दी थी। उस समय उनके द्वारा आदिवासियों को प्रेरित करने हेतु जो भाषण दिए जा रहे थे उनमें आग थी। वे उन्हें अंग्रेजों के आगे कभी सिर न झुकाने हेतु प्रेरित करते थे तथा अंग्रेजों से अपना हक छीनने जैसी बातें होती थी।

सन् 1770 में ही बंगाल में भीषण अकाल पड़ा था जिसमें आदिवासियों को लगा कि लगान कम कर दिया जाएगा लेकिन कंपनी सरकार ने लगान दो गुना तक बढ़ा दिया तथा जबरन वसूली आरंभ कर दी। इससे अंग्रेजो के खिलाफ लोगों की नफरत बढ़ गई। तिलका मांझी ने उस समय अंग्रेजों का भागलपुर में रखा खजाना लूट लिया और उसे सूखे व टैक्स की मार झेल रहे गरीबों में बांट दिया। जिससे वह लोगों में रोबिन हुड जैसे प्रसिद्ध हो गए। तिलका लगातार संघर्ष कर अंग्रेजी शासन को उखाड़ फेंकना चाहते थे। उनकी गतिविधियों से अंग्रेज सेना परेशान हो गई थी अतः उन्हें पकड़ने के लिए मिस्टर क्लीवलैंड के नेतृत्व में सेना भेजी गई। तिलका को जब इसकी भनक लगी तो सेना को देखने वह एक पेड़ पर चढ़ा। मिस्टर क्लीवलैंड ने तिलका को पेड़ पर चढ़ते देख लिया था। "वह घोड़े पर सवार होकर पेड़ के पास पहुंचा। सेना ने भी पेड़ के चारों ओर घेरा डाल लिया था। क्लीवलैंड ने तिलका को ललकारा और पेड़ के नीचे उतर कर आत्मसमर्पण के लिए कहा। तिलका ने क्लीवलैंड पर एक तीर चलाया जो उसकी छाती में जाकर लगा। क्लीवलैंड नीचे गिर पड़ा... इस बीच तिलका फुर्ती से पेड़ के नीचे उतरा और जंगल में गायब हो गया।... अंत में अंग्रेज सेना तिलका को गिरफ्तार करने में सफल हो गई। अपनी हानि का बदला लेने के लिए तिलका को अंग्रेजों ने पेड़ से लटका कर फांसी दे दी।"[1] इस प्रकार 13 जनवरी को 35 वर्षीय वीर को फांसी दे दी गई और वह भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के प्रथम शहीद की उपाधि को प्राप्त कर गये।

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-14, No.-III, Issues-21, YEAR- Sept.-2021

बुधु भगत– भारतीय इतिहास के प्रसिद्ध क्रांतिकारी बुधु भगत का जन्म 17 फरवरी 1792 में रांची, झारखंड में हुआ था। इनको गुरिल्ला युद्ध में निपुणता हासिल थी इसलिए इन्होंने अपने दस्ते को गुरिल्ला युद्ध करने के लिए प्रशिक्षित किया था। यदि शिक्षा की बात की जाए तो उनकी शिक्षा की जानकारी तो उपलब्ध नहीं है किंतु यह कहा जाता है कि वह घंटों अकेले नदी किनारे बैठकर धनुर्विद्या और तलवार चलाने का अभ्यास किया करते थे। वह अपने साथ सदैव कुल्हाड़ी रखते थे, इसीलिए लोग उन्हें दैवीय शक्ति का स्वामी मानते थे।

बुधु भगत बचपन से ही अंग्रेजी सेना और जमींदारों की निर्दयता को देखते आ रहे थे। उनके द्वारा किए जा रहे शोषण के वे निरंतर शिकार हो रहे थे जिसके कारण बुधु भगत में उनके प्रति प्रतिशोध की ज्वाला अंदर ही अंदर धधक रही थी। आदिवासी लोग उनको देवदूत समझकर अन्याय के विरुद्ध उठ खड़ा होने के लिए आव्हान कर रहे थे तथा उनके साथ तीर, धनुष, तलवार, कुल्हाड़ी आदि लेकर खड़े हो गए। इसी समय कैप्टन द्वारा बंदी बनाए गए सैकड़ों आदिवासियों को उन्होंने लड़कर छुड़वा लिया, जिससे अंग्रेजों का गुस्सा सातवें आसमान पर पहुंच गया तथा उन्हें पकड़ने के लिए प्रयास तेज कर दिए। अंग्रेजों की पकड़ से दूर होने पर अंग्रेजों द्वारा उन पर 1000 पुरस्कार की घोषणा भी कर दी किंतु बुधु भगत अभी भी अंग्रेजों के हाथ नहीं लग सका। बुधु भगत छोटा नागपुर के प्रथम क्रांतिकारी थे जिन्हें पकड़ने के लिए अंग्रेजों ने पुरस्कार की घोषणा की। सन् 1828 से 1832 तक केला का विद्रोह बुधु भगत के नेतृत्व में चलता रहा। इस विद्रोह में अंग्रेजों को घुटने टेकने पड़े किंतु "13 फरवरी 1832 में बुधु अपने साथियों के साथ कैप्टन एमपी के द्वारा सिलागांई गांव में घेर लिए गए। उस समय बुधु आत्मसमर्पण करना चाहते थे जिससे कि निर्दोष लोगों की जाने ना जाएं, लेकिन बुधु के भक्त उनके चारों ओर घेरा डालकर खड़े हो गए और कैप्टन की चेतावनी के अनुसार वहां पर अंधाधुंध गोलियां चला दी जिसकी वजह से करीब 300 से अधिक ग्रामीण मारे गए। इसके साथ बुधु भगत और उनके बेटे हलधर और गिरधर भी अंग्रेजों के साथ लड़ाई लड़ते हुए शहीद हो गए।"[2] यह शहादत आज हमारे जीवन के लिए प्रेरणा स्रोत है। अपने देश और समाज के प्रति अन्याय और शोषण के खिलाफ उठ खड़ा होने की। अपने देश को लुटने से बचाने की। देश के प्रति समर्पित होने की।

टंट्या मामा– टंट्या मामा का जन्म मध्य प्रदेश के खंडवा जिले की पंधाना तहसील के ग्राम बड़दा में 26 जनवरी 1842 को हुआ। उनका वास्तविक नाम टंड्रा था लेकिन लोग उन्हें 'टंट्या मामा' कहकर उनका आदर करते थे। सामाजिक कार्यकर्ता राकेश देवड़ा बिरसावादी के अनुसार "शुरुआत में टंट्या भील के विद्रोही प्रवृत्ति को उनके परिवार, समाज और राष्ट्र पर हुए अन्याय और अत्याचार से जोड़कर देखा गया। उन्हें डकैत, लुटेरा इस प्रकार की उपाधि सामंतवादी जमींदारों द्वारा दी गईय क्योंकि यह लोग टंट्या के खिलाफ अंग्रेजी हुकूमत की पुलिस की मदद मांगना चाहते थे इसलिए टंट्या भील को आरोपित किया गया। टंट्या भील का परिवार भी इस अन्याय और शोषण का शिकार हुआ था। उनकी जमीन जमींदार पाटिल के पास गिरवी थी जिसका जबरन कब्जा कर ब्याज के रूप में वसूली जैसी बातों ने मानो गरीब किसानों, आदिवासियों के परिवार को नेस्तनाबूद कर दिया। वह निरंतर श्रम करने के बावजूद भी पेट भर खाना नहीं खा सकते थे। ऐसी स्थिति में महा विद्रोही टंट्या भील का निर्माण हुआ था।"[3] सात फीट दस इंच का टंट्या मामा महा विद्रोही के साथ–साथ महाशक्तिशाली भी थे। उन्होंने अंग्रेज सरकार की नाक में दम कर दिया था। उनके संबंध में कहा जाता है कि वह देवी के मंदिर में आराधना कर शक्ति प्राप्त करते थे और अंग्रेजो के खिलाफ बगावत कर आसपास के घने जंगलों में रहा करते थे। उनके जीवन में वे "एक गांव से दूसरे गांव घूमते रहे। वह मालदारों से माल लूटकर गरीबों में बांटने लगे। लोगों के सुख–दुख में सहयोगी बनने लगे। इसके अलावा गरीब कन्याओं की शादी कराना, निर्धन और असहाय लोगों की मदद करने से टंट्या मामा सबके प्रिय बन गए, जिससे उनकी पूजा होने लगी।"[4] इसीलिए उन्हें भी रॉबिनहुड की उपाधि प्रदान की गई। इस प्रकार उनकी क्रांतिकारी गतिविधियां सन् 1878 से 1889 तक चलती रही। उन पर मुकदमे चलते रहे। अंत में जबलपुर में उन्हें 4 दिसंबर 1889 को फांसी दे दी गई।

बिरसा मुंडा– बिरसा मुंडा का जन्म मुंडा जनजाति में गरीब परिवार में 15 नवंबर 1875 को झारखंड के खुटी जिले के उलीहातू गांव में हुआ था। वे एक भारतीय आदिवासी स्वतंत्रता सेनानी और मुंडा जनजाति के लोक नायक थे। उन्होंने हिंदू और ईसाई धर्म दोनों की शिक्षा ली। झारखंड में अंग्रेजों के आने से पहले झारखंडियों का राज था। लेकिन अंग्रेजी शासन लागू होने के बाद झारखंडियों को उनके राज एवं स्वतंत्रता व स्वायत्तता पर खतरा महसूस हुआ फलतः उन्होंने अपनी स्वतंत्रता, अपने जल, जंगल, जमीन को बचाने के प्रयास में आंदोलन का आगाज कर दिया जिसका नेतृत्व बिरसा मुंडा के हाथों में था। बिरसा मुंडा ने अंग्रेजों 'अपने देश वापस जाओ' का नारा देकर अपने समाज में स्वतंत्रता के लिए जोश भरने का कार्य किया।

यहां यह समझने वाली बात है कि बिरसा मुंडा से पहले जितने भी आंदोलन हुए थे वे अपनी जमीन को बचाने के लिए हुए किंतु बिरसा मुंडा का आंदोलन मूल रूप से तीन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए हुआ था। प्रथम– वह जल, जंगल, जमीन जैसे संसाधनों की रक्षा करना चाहते थे। द्वितीय– वह महिलाओं को सुरक्षा प्रदान करना चाहते थे तथा तृतीय– वह अपने समाज की संस्कृति की मर्यादा को बचाए रखना चाहते थे। उन्होंने अपने आंदोलनों में

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-14, No.-III, Issues-21, YEAR- Sept.-2021

इन्हीं प्रमुख लक्ष्यों को ध्यान में रखा। इन्हीं के लिए वे अपने जीवन में अंग्रेजों से लोहा लेते रहे। अंग्रेज सेना यह भली–भांति समझ चुकी थी कि बिरसा नामक युवक उनके लिए सबसे बड़ी चुनौती है। अंग्रेजों को उन्हें पकड़ने की हर कोशिश नाकाम होती दिखाई दी अंततः उन्होंने यह रणनीति बनाई कि अभाव में जिंदगी व्यतीत करने वाले आदिवासी को खोजा जाए जो बिरसा मुंडा के बीच में रहता है और वह लालच में आ सके। परिणामस्वरूप 4 फरवरी 1900 को जराई केला के रोगतो गांव के सात मुंडाओं ने ₹ 500 इनाम के लालच में बिरसा को रात में खाट सहित बांधकर अंग्रेजों को सौंप दिया। अंग्रेजों ने उसे धीमा जहर दे दिया जिससे 9 जून 1900 को उनकी मृत्यु हो गई।

गोविन्द गुरु– गोविंद गुरु का जन्म डूंगरपुर के बासियां गांव में एक बंजारा परिवार में 20 दिसंबर 1858 को हुआ। चूंकि बंजारा एक घुमंतू जाति है जो अपने व्यापार के लिए इधर–उधर जाती रहती है। गोविंद गुरु भी अपने पिता के साथ व्यापार कार्य से घूमते रहते थे। इन्हीं दिनों गोविंद गुरु ने अपनी यात्राओं में देखा कि राजघरानों, सामंतो द्वारा भोले–भाले आदिवासियों पर अत्याचार, शोषण होता है। इन सब से गोविंद गुरु का ह्रदय दुखी होता था। सन् 1882 – 83 में प्रसिद्ध समाज सुधारक दयानंद सरस्वती से उनके उदयपुर प्रवास के दौरान गोविंद गुरु मिले और उनके समक्ष भीलों की पीड़ा को व्यक्त किया।

स्वामी जी की प्रेरणा व मार्गदर्शन से वे भीलों में समाज सुधार के साथ ही सामंती शोषण का सामूहिक विरोध करने लगे, जिसको धार देने के लिए ही उन्होंने सन् 1903 में 'संप सभा' की स्थापना की जिसका प्रथम अधिवेशन मानगढ़ पर्वत पर हुआ जो कि प्रतिवर्ष होता रहा है। "गोविंद गुरु के नेतृत्व में ही भीलों ने बागड़ की मानगढ़ पहाड़ी पर सन 1913 में क्रांति की जिसमें 1500 से अधिक भील शहीद हो गए। इसके बाद मृत्यु पर्यंत गुजरात के झालोद के पास कंबोई नामक स्थान पर रहकर अपना कार्य पूर्ववत करते रहे। यहीं पर 30 अक्टूबर 1931 को इस महान जननायक भीलों के भगवान संत गोविंद गुरु पुण्य को प्राप्त हुए।"[5] निःसंदेह आज भी इनके भगत इन्हें ईश्वर का अवतार मानते हैं और इनके द्वारा दिए गए उपदेशों का पालन करने के लिए जगह–जगह धूणियों की स्थापना करते हैं।

उक्त अध्ययन से स्पष्ट होता है कि आदिवासियों ने भारत के स्वतंत्रता आंदोलन में सैकड़ों वर्ष पूर्व ही अंग्रेजों के खिलाफ आंदोलन का बिगुल बजा दिया था किंतु इतिहासवेत्ताओं ने आदिवासी आंदोलनों को दरकिनार कर अपने इतिहास में स्थान नहीं दिया जिसके कारण इन नायकों का इतिहास गुमनाम जिंदगी जी रहा है। आज भारत में आजादी का अमृत महोत्सव मनाया जा रहा है जिसके माध्यम से हम उन वीर सेनानियों के शौर्य, पराक्रम को याद कर उनके जीवन से प्रेरणा लेने के लिए विभिन्न कार्यक्रम आयोजित कर रहे हैं किंतु जब तक इतिहास के पन्नों में इन गुमनाम पराक्रमियों को स्थान प्राप्त नहीं होगा तब तक हमारा आजादी का अमृत महोत्सव अधूरा ही रहेगा। अतः आज आवश्यकता है इन पराक्रमियों द्वारा स्वतंत्रता आंदोलन में दिए गए योगदान पर चर्चा करने की। उनके जीवन से प्रेरणा लेने की। इसके लिए भारत के विभिन्न भागों में इन पराक्रमियों के स्मारक बनने चाहिए। विद्यालय व विश्वविद्यालयी पाठ्यक्रम में इनकी वीरता की कहानी को स्थान प्राप्त होना चाहिए तथा विभिन्न विश्वविद्यालयों में इनके नाम पर उच्च अध्ययन हेतु विभाग खोले जाने चाहिए, जहां इन पर शोध कार्य हो सकें ताकि आने वाली पीढ़ी इनके जीवन से प्रेरणा ले सके और भारत के विकास में अपना योगदान दे सके, भारत के लिए समर्पित हो सके। तभी सही मायने में इन सेनानियों की शहादत को सम्मान मिल सकता है अन्यथा आजादी का अमृत महोत्सव उनके लिए बेमानी साबित होगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. मीना जनक सिंह, मीना कुलदीप सिंह : भारत के आदिवासी (चुनौतियां एवं संभावनाएं), वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 83.
2. Jivanihindi.com.
3. Hi.m.wikipedia.org.
4. www.amarujala.com 4 December 2022.
5. मीना जनक सिंह, मीना कुलदीप सिंह : भारत के आदिवासी (चुनौतियां एवं संभावनाएं), वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 88.

*****